इकाई–2

महाकवि भास का परिचय – काल एवं रचनाएँ

इकाई की रूपरेखा :–

2.1 प्रस्तावना

2.2 महाकवि भास का परिचय

2.3 महाकवि भास का जीवनवत्त

2.4 महाकवि भास का काल

2.5 महाकवि भास की रचनाएँ

2.1 प्रस्तावना –

संस्कृत कविता कामिनी के हास भास का नाम संस्कृत नाटक के इतिहास में बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है। संस्कृत नाटकों के विकास के इतिहास में भास वह जाज्वल्यमान मणि है, जिनकी कीर्ति–कौमुदी की प्रसृति काल के दुर्दम्य प्रभाव से अस्पष्ट रही अथच सुदूर दक्षिण से लेकर ध्रुव उत्तर तक एवं प्राची से लेकर प्रतीची तक सम्पूर्ण भरतखण्ड में चमकती रही। नाटक को पंचम वेद होने का जो गौरव भरत ने प्रदान किया तथा कालिदास ने जो उसे भिन्न रूचि जनों का एकत्र समाराधन कहा, इसकी सम्यक् परिपुष्टि भास के नाटकों से होती है। नाटक कवित्व का चरम परिपाक है – ''नाटकान्तं कवित्वम्''। उसमें तीनों लोकों के भावों का अनुवर्तन होता है। जब हम इस दृष्टि से विचार करते हैं तो भास की महत्ता और बढ़ जाती है। उस सुदूर अतीत में जब लौकिक संस्कृत अभी अपनी दिशा निर्माण कर रही थी, भास ने तेरह नाटकों की रचना की और केवल रचना ही नहीं की अपितु सफलता भी अर्जित की। यह नाट्य साहित्य के इतिहास में चिरस्मरणीय बात है।

डॉ• वचनदेव कुमार के मतानुसार अंग्रेजी के विश्ववन्द्य नाटककार शैक्सपीयर के निर्माण की पृष्ठभूमि के रूप में जिस प्रकार मारलो ने कार्य किया ठीक उसी प्रकार कविकुल गुरू कालिदास के विकास की प्रस्तावना भास ने प्रस्तुत की। भास कितने लोकप्रिय नाटककार थे, इसका अनुमान तो कालिदास के ''मालविकाग्निमित्र'' के सूत्रधार के कथन से ही हो जाता है –

''प्रथितयशसां भाससौमिल्लकविपुत्रादीनां प्रबन्धानतिक्रम्य कथं वर्तमानस्य कवेः कालिदासस्य क तौ बहुमानः।'' अर्थात् भास, सौमिल्ल, कविपुत्र जैसे रव्यातिप्राप्त नाटककारों की कृतियों के रहते हुये इस कालिदास को किस प्रकार समादर प्राप्त होगा।

2.2 भास का परिचय –

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि कालिदास, शूद्रक आदि के समान भास ने भी अपने जीवन चरित्र

के विषय में कोई प्रकाश नहीं डाला है, यहाँ तक कि अपनी रचनाओं में अपना नामोल्लेख भी नहीं किया है।

भास को संस्कृत नाट्य साहित्य का जनक कहा गया है। नाटककार के रूप में इनका नाम अत्यन्त प्राचीनकाल से ही अत्यन्त प्रसिद्ध है। कालिदास के पश्चात् बाणभट्ट ने अपने ''हर्षचरित'' में भास के नाटकों की उन विशेषताओं को उपन्यस्त किया है, जिनसे उसने यशलाभ प्राप्त किया :–

''सूत्रधार क तारंभै र्नाटकै र्बहुभूमिकैः।
सपताकैर्यशोलेभे भासो देवकुलैरिव।।

यह उल्लेख इस तथ्य को स्पष्ट कर देता है कि संस्कृत नाट्य क्षेत्र में लगभग सातवीं सदी तक के विस्तृत कालखण्ड में भास की कीर्तिपताका छायी रही थी।

महाकवि दण्डी ने भी ''अवन्तिसुन्दरी कथा'' में भास का स्मरण किया है। राजशेखर ने अपने ग्रन्थ काव्यमीमांसा में कहा है कि जब नागरिकों ने परीक्षा करने के लिए भास के नाटक चक्र को अग्नि में डाला तो ''स्वप्नवासवदत्तम्'' नाटक को अग्नि ने नहीं जलाया –

''भासनाटकचक्रेऽपि छेकैः क्षिप्ते परीक्षितुम्।
स्वप्नवासवदत्तस्य दाहकोऽभून्न पावकः।।

''प्रसन्नराघव'' के कर्ता पीयूषवर्ष जयदेव ने ''भासो हासः कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः'' कहकर नाट्यकारों में भास का प्रथम उल्लेख किया है।

इन सब प्रसंगों से ज्ञात होता है कि भास बहुत प्राचीन काल से ही लब्धप्रतिष्ठ हैं। भास का व्यक्तित्व निश्चित रूपसे असंदिग्ध है तथापि खेद का विषय है कि उनके जीवनवृत्त के विषय में कोई प्रामाणिक जानकारी अभी तक उपलब्ध नहीं हुई है। सन् 1912 से पूर्व इनका नाम एक समस्या सा था। परन्तु 1912 में महामहोपाध्याय गणपति शास्त्री जी ने जब त्रिवेन्द्रम में भास के तेरह नाटकों का प्रकाशन किया तो विद्वानों के आश्चर्य व आनन्द का ठिकाना न रहा।

इसके बाद इन नाटकों की प्रामाणिकता को लेकर विद्वानों में तर्क–वितर्क प्रारंभ हुआ तथा एक भीषण विवाद उड़ खड़ा हुआ। इस नाट्य समूह का कर्तत्व एवं साथ ही विभिन्न अन्तरंग एवं बाह्य साक्ष्यों के आधार पर भास का समय निर्धारित करने में विद्वानों ने पर्याप्त परिश्रम किया। यह सब इसलिए हुआ क्योंकि अन्य प्राचीन महाकवियों के समान ही इन रचनाओं में भी लेखक के नाम अथवा स्थितिकाल के सम्बन्ध में कोई उल्लेख नहीं है।

2.3 भास का जीवनवृत्त –

भास का जीवनवृत्त ज्ञात नहीं है। विद्वानों ने मात्र अन्तरंग प्रमाणों के आधार पर अनुमान लगाने का प्रयास किया है, जैसे उनकी जाति के सम्बन्ध में विद्वानों का अनुमान है कि वे ब्राह्मण थे। डॉ• पुसालकर तथा ए•एस•पी• अय्यर आदि विद्वानों ने उनके द्वारा विरचित साहित्य के अध्ययनोपरान्त ऐसा मत व्यक्त किया है। ब्राह्मणीय धर्म तथा समाज व्यवस्था के प्रति उनका महान् आग्रह, अनुकुलीनों का सुरुप न होना (अविमारक) आदि तथ्य उन्हें ब्राह्मण सिद्ध करते हैं।

कालिदास के समान भास के विषय में भी यह ज्ञात नहीं कि वे किस क्षेत्र के रहने वाले थे, उनका कहाँ जन्म हुआ था तथा शिक्षा–दीक्षा कहाँ हुई थी ? विद्वानों की मान्यता है कि वे उत्तरी भारत के

निवासी थे। इसका कारण उनके नाटकों में उत्तरी भारत के नगर, नदी, पर्वत तथा रीति–रिवाजों का बड़ा व्यापक वर्णन होना माना गया है। उज्जैनी, अयोध्या तथा मथुरा में इनकी वृत्ति विशेष रमी है। अतः यह प्रतीत होता है कि भास ने इस स्थानों का आँखों देखा वर्णन किया है। ''हिमवद् विन्ध्यकुण्डलाम्'' स्पष्ट संकेत करता है कि वे उत्तरी भारत के निवासी थे। उत्तरी भारत की तुलना में भास का दक्षिणी भारत का ज्ञान बहुत ही सीमित प्रतीत होता है। उनका दक्षिणी भारत का ज्ञान रामायण तथा महाभारत तक सीमित प्रतीत होता है। रामकथा वर्णित करने पर भी रामेश्वरम् जैसे तीर्थं का उल्लेख न करना इस अनुमान की पुष्टि करता है।

भास का राजकुलों से गहन सम्बन्ध दृष्टिगत होता है। राजप्रासादों, अन्तःपुरों आदि के वर्णन में इन्होंने विशेष रूचि प्रदर्शित की है। अतः ऐसा लगता है कि किसी राजसभा से इनका सम्बन्ध रहा हो। ''राजसिंहः प्रशास्तु नः'' की उक्ति इसी का समर्थन करती दिखाई पड़ती है। अमात्यों, सेना, द्वन्द्व आदि का वर्णन इनके नाटकों मे ंसर्वथा दिखाई पड़ता है। राजकुल के अलावा धनी मानी नागरजनों से भी इनका सम्पर्क रहा होगा। चारूदत्त नाटक नागरजनों के जीवन का सच्चा प्रतिनिधि है।

भास के नाटकों के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि भास अनेक शास्त्रों के ज्ञाता थे। वेद, इतिहास, पुराण लोककथाएँ, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि नाना शास्त्रों का इन्होंने गंभीर अध्ययन किया था। साहित्य शास्त्र में उनकी निपुणता असन्दिग्ध है।

जहाँ तक भास के धर्म का सम्बन्ध है, वे वैष्णव धर्म के अनुयायी प्रतीत होते हैं। राम तथा कृष्ण के चरित्रों में उनकी अनुरक्ति इस विषय में प्रमाण है। वैष्णव होने के साथ साथ वैदिक कर्मकाण्ड में भी वे पूर्ण विश्वास रखते थे। गौ–ब्राह्मणों में भी उनकी अत्यधिक अनुरक्ति थी।

2.4 महाकवि भास का काल –

महाकवि भास का स्थितिकाल निर्धारित करना प्रायः एक अत्यन्त जटिल प्रश्न है। फिर भी कुछ तथ्य ऐसे हैं, जिनके आधार पर भास की स्थिति की सीमा निर्धारित की जा सकती है। जैसे –

1. महाकवि कालिदास ने ''मालविकाग्निमित्र'' की प्रस्तावना में भास का उल्लेख किया है, अतः भास कालिदास के पूर्ववर्ती प्रतीत होते हैं। किन्तु कालिदास के स्थितिकाल का प्रश्न विवादास्पद होने से भास के स्थितिकाल का वास्तविक निर्धारण करना कठिन है। अधिकांश पाश्चात्य विद्वान्, कालिदास को गुप्तकालीन अर्थात् चतुर्थ शताब्दी का मानते हैं। इस दृष्टि से भास कालिदास से पूर्व अर्थात् चतुर्थ शताब्दी पूर्व के होते हैं। इसलिए कुछ विद्वान् उन्हें ईसा की दूसरी शताब्दी में मानते हैं।

   भारतीय विद्वान् कालिदास का समय ई•पू• 57 ई• के पूर्व मानते हैं। अतः भास उनसे कम से कम सौ वर्ष पहले अवश्य होंगे जबकि उनकी ख्याति पूर्ण रूप से फैल गई होगी।

2. इस विषय पर प्रायः सभी विद्वान् एकमत हैं कि ''मृच्छकटिक'' की रचना का आधार भास का ''चारुदत्त'' नाटक है। मृच्छाकटिक शूद्रक की रचना है, अतः भास शूद्रक के पूर्ववर्ती हैं।

3. कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में भास रचित प्रतिज्ञा

   यौगन्धरायण का एक श्लोक उद्‌धृत किया है, जो इस प्रकार है –

''नवं शरावं सलिलस्य पूर्णं,
सुसंस्कृतं दर्भकृतोत्तरीयम्।
तत्तस्य मा भून्नरकं च गच्छेद्,
यो भर्तृपिण्डस्य कृते न बुध्येत्।।

कौटिल्य जैसे प्रखर राजनीतिज्ञ द्वारा भास का प्रमाण रूप से उद्‌धृत किया जाना इस बात का सूचक है कि भास कौटिल्य के समय चतुर्थ शताब्दी ई•पू• के उत्तरार्द्ध में एक प्रमाणिक ग्रन्थकार के रूप में विख्यात हो चुके थे।

4. भास ने उदयन से सम्बन्धित नाटकों की रचना की है, अतः उनका उदयन के काल से परवर्ती होना सिद्ध होता है। चूंकि उदयन का काल ई•पू• तृतीय शती माना जाता है, अतः भास तृतीय शती ई• पूर्व से अधिक प्राचीन नहीं हो सकते।

5. अश्वघोष ने अपने ''बुद्धचरित'' महाकाव्य में भास का एक श्लोक अविकल रूप से उद्‌धृत किया है, जो इस प्रकार है :–

''काष्ठं हि मथ्नन् लभते हुताशं,
भूमिं खनन् विन्दति चापि तोयम्।।
निर्बन्धितः किन्चन्, नास्त्यसाध्यं,
न्यायेन भुक्तं च क तं च सर्वम्''।।

इससे स्पष्ट है कि भास अश्वघोष से पर्याप्त पूर्ववर्ती रहे हैं तथा अश्वघोष ने उन्हें प्रमाणिक ग्रन्थकार की श्रेणी प्रदान की है।

6. प्रतिमा नाटक के पंचम अंक के रावण के परिचय में जिन अधीत विद्याओं का उल्लेख है, उनका अध्ययन अध्यापन ई•पू• चतुर्थ शताब्दी के लगभग का था, अतः भास इसके उपरान्त ही हो सकते हैं, इसके पूर्व के नहीं।

7. भास की रचनाओं पर जिस पौराणिक ब्राह्मणधर्म का प्रभाव दिखाई पड़ता है, उसका पुनरुत्थानकाल ई•पू• तृतीय शताब्दी रहा है। अतः भास इस काल में या इसके उत्तरवर्ती काल में ही अवश्य हुये होंगे।

8. डॉ• लेस्नी, प्रिन्ट्ज तथा सुकथंनकर जैसे विद्वानों ने प्राकृत भाषा की समीक्षा कर इन्हें कालिदास से प्राचीन तथा अश्वघोष से नवीन सिद्ध किया है। भास की प्राकृत भाषा कालिदास से प्राचीन ठहरती है पर अश्वघोष की भाषा का समय इससे भी पूर्वत्तर है। ये विद्वान् कालिदास को ईसा की पाँचवीं सदी में मानते हैं। इस आधार पर वे भास का समय तीसरी सदी में निश्चित करते हैं।

9. भास के नाटकों का आधार रामायण, महाभारत तथा लोककथाएँ हैं। उदयन का आख्यान ऐतिहासिक है। उदयन, प्रद्योत तथा दर्शक छठी सदी ई• पूर्व के ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। ई•पू• छठी सदी में रामायण तथा महाभारत भी मूल रूप में विद्यमान थे, अतः भास की उपरितम समय सीमा ई•पू• छठी सदी ठहरती है।

10. भास के नाटकों में वर्णित सामाजिक दशायें, अर्थशास्त्र तथा अन्य शास्त्रों से सम्बद्ध प्रतीत होती है। प्रतिमा में मंदिर के परिवेश में बालुका डालने का विधान केवल आपस्तम्भ सूत्रों में ही मिलता है। मरे हुये व्यक्तियों की प्रतिमाओं की स्थापना भी शिशुनाग राजाओं के युग की याद दिलाता

है मथुरा में शिशुनाग राजाओं की प्रस्तर मूर्तियाँ खोज में मिली हैं।

11. भरतवाक्यों में उल्लिखित ''राजसिंह'' शब्द व्यक्ति वाचक नहीं है। हिमालय से लेकर विन्ध्य तक शासन करने वाला राजा का संकेत संभवतः नन्दवंश की ओर है।

उक्त अन्तरंग एवं बाह्य साक्ष्यों के आधार पर पाश्चात्य विद्वानों ने भास का समय चतुर्थ शतक तथा पंचम शतक के बीच माना है। वही भारतीय विद्वानों की धारणा ई•पू• तृतीय शताब्दी से लेकर ई•पू• द्वितीय शताब्दी के बीच की है।

2.5 भास की रचनायें –

श्री टी• गणपति शास्त्री ने सर्वप्रथम भास के तेरह नाटकों को भास के नाम से प्रकाशित करवाया। जब ये नाटक प्रकाश में आये तो यह प्रश्न प्रारंभ से ही पुरजोर शब्दों में उठाया गया कि क्या ये ग्रन्थ भास के द्वारा ही लिखे गये और यदि भास इनके लेखक हैं तो क्या सभी नाटकों के हैं अथवा कुछेक के ही। पर इन नाटकों के सूक्ष्म अन्वीक्षण से यह स्पष्ट लक्षित हो जाता है कि इन सभी नाटकों के रचयिता एक ही व्यक्ति थे। इस संदर्भ में अनेक प्रमाण व इन नाटकों में पायी जाने वाली समानताओं को प्रस्तुत किया गया। उन साम्यों के आधार पर यह सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया कि इन नाटकों का रचयिता कोई एक ही व्यक्ति था।

इनके पश्चात् यह विवाद उपस्थित हुआ कि इन नाटकों के प्रणेता भास ही थे अथवा अन्य कोई। डॉ• ए•डी• पुसालकर तथा प्रो• ए•बी• कीथ इन्हें भासकृत बताते हैं। इसके ठीक विपरीत पिशरोती, कुन्हनराजा, देवधर तथा विन्टरनित्ज इन्हें भासकृत नहीं मानते। मध्यम मार्ग डॉ• सुकथनकर आदि का है जो कुछ नाटकों को तो भासकृत मानते हैं पर कुछ को भास के नाम के साथ पीछे से जोड़ा गया मानते हैं।

यह सब प्रारंभिक स्थिति थी। वर्तमान में प्रायः अधिकांश विद्वानों की यह मान्यता है कि ये रचनायें भास की हैं। इन कृतियों के मूलतः तीन स्त्रोत हैं – रामकथा, महाभारत तथा लोककथा।

क. रामकथा पर आश्रित नाटक – 1. प्रतिमा 2. अभिषेक

ख. महाभारत पर आश्रित नाटक – 1. मध्यम व्यायोग 2. दूतघटोत्कच 3. कर्णभार 4. दूतवाक्य 5. उरुभंग 6. पंचरात्र 7. बालचरित

ग. लोककथा पर आश्रित नाटक – 1. प्रतिज्ञायौगन्धरायण 2. स्वप्नवासवदत्तम् 3. अविमारक 4. दरिद्रचारूदत्त।

भास की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय

1. **प्रतिमा** – यह सात अंकों का नाटक है, जिसमें भास ने राम वनगमन से लेकर रावणवध तथा राम राज्याभिषेक तक की घटनाओं को स्थान दिया है। महाराज दशरथ की मृत्यु के उपरान्त ननिहाल से लौट रहे भरत अयोध्या के पास मार्ग में स्थित देवकुल में पूर्वजों की प्रतिमायें देखते हैं, वहाँ दशरथ की प्रतिमा देखकर वे उनकी मृत्यु का अनुमान कर लेते हैं। प्रतिमा दर्शन की घटना प्रधान होने से इसका नाम प्रतिमा नाटक रखा गया है।

प्रतिमा निर्माण की कथा भास की अपनी मौलिकता है। भास ने इस नाटक में मौलिकता

लाने में प्रचलित रामचरित से पर्याप्त पार्थक्य ला दिया है। यद्यपि ये सारी घटनायें प्रचलित कथा से भिन्न हैं, पर नाटकीय दृष्टि से इनका महत्व सुतरां ऊँचा है और पाठक अथवा दर्शक की कुतूहल वृद्धि में ये घटनायें सहायक हुई हैं। इस नाटक में रामायणीय कथा से भिन्नतायें इस प्रकार हैं – प्रथम अंक में सीता द्वारा परिहास में वल्कल पहनना भास की मौलिकता है। तृतीय अंक में प्रतिमा का सम्पूर्ण प्रकरण ही कवि कल्पित है और यह कल्पना ही नाटक की आधारभूमि बनायी गयी है। पाँचवें अंक में सीता का हरण भी यहाँ नवीन ढंग से बताया गया है।

यहाँ राम के उटज में वर्तमान रहने पर ही रावण वहाँ आता है और दशरथ के श्राद्ध के लिए उन्हें काञ्चनपार्श्व मृग लाने को कहता है तथा उन्हें काञ्चन मृग दिखाकर दूर हटाता है। यह सम्पूर्ण प्रसंग नाटककार द्वारा गढ़ा गया है। पांचवें अंक में सुमंत्र का वन में जाना तथा लौटकर भरत से सीताहरण बताना कवि कल्पना का प्रसाद है। कैकेयी द्वारा यह कहना भी कि उसने ऋषिवचन सत्य करने के लिए राम को वन भेजा भास की प्रसूति है। अन्ततः सप्तम अंक में राम का वन में ही राज्याभिषेक इस नाटक में मौलिक ही है।

प्रतिमा नाटक भास के सर्वोत्तम नाटकों में से एक है। सात अंकों के इस नाटक में भास की कला पर्याप्त ऊँचाईं को प्राप्त कर चुकी है। इस नाटक में भास ने पात्रों का चारित्रिक उत्कर्ष दिखाने का भरसक प्रयास किया है। इतिवृत्त तथा चरित्र चित्रण दोनों दृष्टियों से यह नाटक सफल हुआ है। भावों के अनुकूल भाषा तथा लघु विस्तारी वाक्य भास के नाटकों की अपनी विशेषताएँ हैं। यह करुणरस प्रधान नाटक है तथा अन्य रस इसी में सहायक बनकर आये हैं।

2. **अभिषेक** – यह भी रामकथा पर आश्रित है। इसमें छः अंक हैं। इसमें रामायण के किष्किंधाकाण्ड से युद्धकाण्ड की समाप्ति तक की कथा अर्थात् बालिवध से राम राज्याभिषेक तक की कथा वर्णित है। रामराज्याभिषेक के आधार पर ही इसका नामकरण किया गया है। कथानक को सजाने संवारने में नाटककार ने पर्याप्त मौलिकता का परिचय दिया है। बालिवध को न्याय्य रूप देने का भी नाटककार ने पर्याप्त प्रयास किया है।

इस नाटक के नायक मर्यादापुरूषोत्तम श्री रामचन्द्र हैं। लोकोपदेश उनके चरित्र का प्रधान भाग है। लक्ष्मण का चरित्र इस नाटक में विशेष प्रस्फुटित नहीं हो सका है। वे श्रीराम के एक आज्ञाकारी सेवक तथा विनीत भक्त के रूप में सामने आते हैं। सुग्रीव का चरित्र इस नाटक में प्रारंभ से लेकर अन्त तक किसी न किसी रूप में वर्तमान रहता है। विभीषण न्यायप्रिय भगवद् भक्त के रूप में अंकित किया गया है। रावण क्रूर, दुराचारी तथा परस्त्री लम्पट के रूप में चित्रित किया गया है।

अभिषेक नाटक के प्रणयन में भास ने पर्याप्त सफलता प्राप्त की है। यद्यपि काव्य तथा नाटकीयता की दृष्टि से यह नाटक प्रतिमा नाटक की अपेक्षा अवर कोटि का है तथापि इस नाटक की अपनी विशेषतायें हैं। राम–रावण युद्ध अपनी विशिष्टताओं में बेजोड़ है। पात्रों का कथोपकथन आकर्षक है। छोटे–छोटे तथा सरल वाक्यों का विन्यास भास की अपनी विशेषता है तथा उस विशेषता का दर्शन इस नाटक में होता है।

इस नाटक का प्रधान रस वीर है जो समग्र नाटक में व्याप्त है, पर करूण रस भी यत्र तत्र अनुस्यूत है। इसकी सत्ता बालिवध के अनन्तर, सीता के सन्ताप आदि में देखी जा सकती हैं। श्रृंगार का इसमें अभाव है तथा उसके लिए कहीं अवसर भी नहीं आया है।

3. **मध्यम व्यायोग** – यह एक अंक का व्यायोग है। व्यायोग रुपक का एक भेद होता है। इसकी

कथावस्तु का आधार महाभारत है। इसमें पाण्डवों के वनवास काल में भीम द्वारा घटोत्कच के पंजे से एक ब्राह्मण बालक की मुक्ति की कथा है। मध्यम शब्द मध्यम पाण्डव भीम और ब्राह्मण के मध्यम पुत्र दोनों के लिए प्रयुक्त हुआ है। इसलिए इस नाटक का नाम ''मध्यम व्यायोग'' है।

नाटकीय दृष्टि से यह नाटक उत्तम कोटि का है, क्योंकि इस परिपाक तथा भावोन्मेष में नाटककार को पूरी सफलता प्राप्त हुई है। कथोपकथनों में कहीं वैरस्य नहीं आता तथा दर्शक का कुतूहल प्रतिक्षण बढ़ता हुआ दिखाई देता है। इन कथोपकथनों में भाषा भी बड़ी सहायक सिद्ध हुई है। लम्बे समासान्त पदों का यहाँ अभाव है। भाषा सरलता में बेजोड़ है। घटनाक्रम में सत्वरता प्रभावोत्पादन में चार–चाँद लगा देती है। भास का काव्य कर्म भी इस रुपक में सफल रहा है।

4. **कर्णभार** – यह भी एक अंक के कथानक वाला महाभारत की कथावस्तु से सम्बद्ध व्यायोग है। द्रोणाचार्य के परलोक सिधारे जाने पर कर्ण को सेनापति बनाया जाता है तथा युद्ध का भार उस पर आ पड़ता है, इसलिए नाटक का नाम ''कर्णभार'' है।

''कर्णभार'' शीर्षक की व्याख्या विद्वानों ने अनेक प्रकार से की है। प्रो॰ ए॰डी॰ पुसालकर की सम्मति में कानों के भारभूत कुण्डलों का दानकर यहाँ कर्ण की अद्‌भुत दानशीलता वर्णित की गई है। अतः कानों के आधारभूत कुण्डलों के दान को केन्द्र मानकर इस नाटक की रचना करने से इस नाटक का नाम ''कर्णभार'' है। डॉ॰ विन्टरनित्स ने कर्णभार की व्याख्या कर्ण के कठिन कार्य से की है। डॉ॰ भट्‌ट की धारणा है कि कर्ण की चिन्ता ही भारस्वरूप हो गई है। इसी बात को ध्यान में रखकर इस नाटक का नाम कर्णभार रखा गया है। कुछ लोगों के मत में कर्ण द्वारा प्राप्त युद्ध कौशल उनके लिए भारभूत हो गया था, अतः इस नाटक का नाम कर्णभार पड़ा।

इस नाटक में दो पात्रों का चरित्र मुख्य रूप से चित्रित है। एक है इस नाटक के नायक कर्ण और दूसरे हैं, छद्म ब्राह्मण वेशधारी देवराज इन्द्र। कर्ण के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता जो यहाँ उभर कर सामने आयी है, वह है उसकी अपूर्व ब्राह्मण निष्ठा तथा महती दानशीलता। वह ब्राह्मणों के लिए सर्वस्व दान करने के लिए तत्पर दिखाई पड़ता है। जब इन्द्र गौ, सुवर्ण आदि लेना अस्वीकार करते हैं, तब वह अपना सिर देने की बात कहता है। उसका विश्वास है कि मरने पर भी यश ही स्थिर रहता है – ''हतेषु देहेषु गुणा धरन्ते''। कर्ण के चरित्र की दूसरी बड़ी विशे ाता है कि वह दान से किसी प्रतिफल की आशा नहीं रखता।

इन्द्र के चरित्र में स्वार्थी रुप के अतिरिक्त अन्य कोई विशेषता लक्षित नहीं होती। शल्य का चरित्र कोई विशेष उभरकर सामने नहीं आया है।

अपने लघु विस्तार में यह नाटक पूर्ण है। काव्यरस के परिपाक तथा नाटकीय तत्वों के निर्वाह दोनों दृष्टियों से यह नाटक उच्च कोटि का है। यद्यपि नाटक का विषय वीर रस और युद्ध भूमि से ही सम्बन्ध रखता है, पर नाटक में करुण रस की ही विशष प्रभा दिखाई पड़ती है।

5. **पंचरात्र** – यह तीन अंकों का ''समवकार'' हे। इसकी कथा महाभारत के विराट पर्व पर आधारित है। इसका नामकरण स्पष्ट रूप से पॉच रात्रियों में पाण्डवों को ढूँढनें की बात से हुआ है। द्रोणाचार्य के सत्प्रयास से पाण्डव मिल जाते हैं तथा दुर्योधन द्वारा उन्हें आधा राज्य दे दिया जाता है।

इस नाटक में सबसे प्रधान चरित्र दुर्योधन का चित्रित है। आरंभ से अन्त तक वह नाटक में वर्तमान है। नाटक में सर्वप्रथम एक धार्मिक राजा के रूप में उसका चरित्र सामने आया है।

पाण्डवों को राज्य भ्रष्ट कर वह महान् यज्ञ का प्रवर्तन करता है। यज्ञ में सभी देश देशान्तर के राजा उसको कर देने उपस्थित होते हैं। यह उनके महान् शौर्य पराक्रम को घोषित करता है। अवभृथ स्नान के समय दुर्योधन की अटूट गुरूभक्ति भी सामने आती है।

काव्योत्कर्ष की दृष्टि से यह रुपक उत्तम कोटि का कहा जायेगा। सरल शब्दावली में भावोन्मेष भास की अपनी विशेषता है। शब्दों के आश्रय से भास ऐसा चित्र खड़ा कर देते हैं कि पूरा दृश्य ही सामने आ जाता है। अलंकारों की संघटना भी नितान्त आकर्षक है। स्थान–स्थान पर सूक्तियाँ इस बारीकी के साथ दी गई हैं कि प्रभावोत्पादन में वे दूनी वृद्धि कर देती हैं।

इस रूपक का प्रधान रस वीर है। श्रृगांर का इसमें पूर्णरूपेण अभाव है, जो नाटक में स्त्रीपात्रों के न आने से हुआ है। संक्षेप में इसे भासे की नाट्यचातुरी का अनुपम उदाहरण कहा जा सकता है।

6. **उरुभंग** – यह भी महाभारत की कथा पर आश्रित एक एकांकी है, इसमें व्यायोग के लक्षण घटित होते हैं। द्रोपदी के अपमान का प्रतिशोध लेने हेतु भीम व दुर्योधन का गदायुद्ध इसमें वर्णित हुआ है। इसमें एक ही अंक है तथा समय व स्थान की अन्विति का पूर्ण रूप से पालन किया गया है। नाटक की विशि टता इसके दुःखान्त होने के कारण है।

इस रुपक का नायक दुर्योधन है। उसके चरित्र विन्यास में नाटककार ने पर्याप्त कौशल प्रदर्शित किया है। इस एंकाकी में नाटककार ने उसके चरित्र को नितान्त उदात्त तथा प्राञ्जल रूप में प्रदर्शित किया है। वह शौर्य पराक्रम का जीवन्त प्रतीक है। दुर्योधन के अतिरिक्त अश्वत्थामा तथा बलराम का व्यक्तित्व भी अपने में महत्वपूर्ण है।

संस्कृत नाट्य–साहित्य में उरुभंग अपना विशिष्ट स्थान रखता है। नाटकीय कौशल की दृष्टि से यह नाटक प्रशंसनीय है। कथोपकथनों में स्वाभाविकता सर्वत्र परिलक्षित होती है। समय और पात्र के अनुकूल ही वार्तालापों की संघटना की गई है। दुर्योधन के उरुभंग हो जाने पर बलराम जी की चे टाओं तथा कथनों में पर्याप्त स्वाभाविकता है।

रस की दृष्टि से भी नाटककार को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है। नाटक में करुण तथा वीर रस परस्पर अनुस्यूत हैं। इन दोनों रसों के चित्रण में लेखक को पर्याप्त सफलता मिली है।

7. **बाल चरित** – इसमें पाँच अंक हैं, यह नाटक भगवान् श्री कृष्ण की बाल लीलाओं पर आधारित है। पुराणों मे ंयह प्रसंग बहुचर्चित है। विशेषतः श्रीमद्भागत महापुराण का तो यही सार है। इसमें श्रीकृष्ण के जन्म से कंस वध तक की कथा वर्णित है।

इसमें बाल रुपधारी भगवान् श्री कृष्ण की लीलायें व चरित्र प्रदर्शित है। अतः इस नाटक का नाम बालचरित रखा गया है।

इस नाटक में नायक के रूप में भगवान् श्री कृष्ण का चरित्र वर्णित है। नाटककार इन्हें साक्षात् परात्पर ब्रह्म के रूप में चित्रित करता है। पृथ्वी के भार को दूर करने तथा गो–ब्राह्मण की रक्षा एवं असुरों के संहार के लिये उन्होंने नर रूप धारण किया है। इसमें कृष्ण का अलौकिक एवं मानवीय दोनों रूप स्पष्टतः देखेन को मिलते हैं।

कृष्ण के अलावा बलराम, वसुदेव जी एवं कंस का चरित्र भी इस नाटक में चित्रित किया गया है। वासुदेव जी का चरित्र शालीनता से ओतप्रोत है। कंस का चरित्र अत्यधिक कठोर प्रदर्शित किया गया है।

नाटकीय दृष्टि से इसे एक सफल नाटक कहा जा सकता है। इसका नायक प्रख्यात तथा धीरोदात्त है। वह नायक के सभी गुणों से सम्पन्न है। इस की दृष्टि से इसमें वीर रस प्रधान है तथा करूण, रौद्र आदि रस अंग रूप में आये हैं। भाषा कथोपकथनों के अनुरूप है। सरल भाषा दर्शक के हृदय पर अपना अपूर्व प्रभाव डालती है।

काव्य परिपाक की दृष्टि से यह नाटक अत्यन्त प्रशंसनीय है। अलंकारों का सुन्दर व समुचित प्रयोग किया गया है। बालचरित का निम्न श्लोक अनेक अलंकार ग्रन्थों में उल्लिखित हुआ है –

''लिम्पतीव तमोऽगांनि वर्षतीवान्जनं नभः।
असत्पुरूष सेवेव दृष्टिर्निष्फलतां गता।। (1/15)

रात्रि के वर्णन में नाटककार को विशेष सफलता प्राप्त हुई है। शब्दों के द्वारा भावदशा के चित्रण में भास ने महान् सफलता प्राप्त की है। शब्दों के आश्रय से सम्पूर्ण भावदशा सारी परिस्थितियाँ साक्षात् दृष्टिगत होने लगती हैं।

8. **दूतवाक्य** – यह भी एकांकी नाटक है। रुपक के भेदानुसार यह ''व्यायोग'' है। इसमें श्रीक भण का दूत के रूप में वर्णन हुआ है। श्रीकृष्ण दुर्योधन के पास संधि का प्रस्ताव लेकर आते हैं किन्तु उनका वहाँ अपमान किया जाता है तथा वे असफल होकर लौटते हैं। वे कुद्ध होकर सुदर्शन चक्र का आह्वान करते हैं तथा उसे दुर्योधन का वध करने का आदेश देते हैं। परन्तु वह वैसा करने से रोकता है। इसकी कथावस्तु महाभारत से ली गई है।

इसका नामकरण बहुत ही सटीक है। सम्पूर्ण नाटक दूतवेषधारी श्रीकृष्ण के वचनों से अनुप्रमाणित है। अतः ''दूतवाक्य'' नाम पूर्णतया सार्थक है। सम्पूर्ण नाटक वीररस से ओतप्रोत है। श्रीक भण के अस्त्रों की सहसा उद्‌भावना तथा विराट रूप प्रदर्शन में अद्‌भुत रस का चमत्कार है। प्रधान रूप से आरभटी वृत्ति की योजना है।

राजनीतिक सिद्धान्तों की यह नाटक खान है। ''दा़याद्य'' को लेकर दुर्योधन एवं श्रीकृष्ण के मध्य हुआ वार्तालाप अत्यन्त रोचक एवं सटीक है। राज्यशासन के संदर्भ में दुर्योधन का कथन अत्यन्त सारगर्भित एवं महत्वपूर्ण है। वह कहता है कि ''राज्य शासन असक्तों का काम नहीं वह तो महान् बलशालियों से सिद्ध होता है –

''राज्यं नाम नृपात्मजैः सहृदयैर्जित्वा रिपून् भुज्यते।
तल्लोके न तु याच्यते न तु पुनर्दीनाय वा दीयते।।

भास की भाषा सरल, पात्रानुकूल व रसानुरूप है।

9. **दूत घटोत्कच** – यह एकांकी भी महाभारत की कथा पर आधारित है। इसमें अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् श्रीकृष्ण घटोत्कच को दूत रूप में धृतराष्ट्र के पास भेजते हैं। दुर्योधन क्रुद्ध होकर घटोत्कच का तिरस्कार करता है। दोनों में परस्पर वाद विवाद होता है। घटोत्कच दुर्योधन को युद्ध के लिये ललकारता है। धृतराष्ट्र उसे ान्त करते हैं। अन्त में घटोत्कच अर्जुन द्वारा अभिमन्यु का बदला लेने की बात कहकर धमकी देते हुये निकल जाता है। घटोत्कच के दूत बनकर जाने के कारण ही इसका नाम ''दूत घटोत्कच'' रखा गया है।

इस नाटक का प्रधान पात्र घटोत्कच है। वह वीर रस से ओतप्रोत है। वीरता के साथ–साथ उसमें शालीनता तथा शिष्टता भी समभावेन दृष्टिगत होती है। वह वाक्‌पटु भी है।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि नाटककार ने घटोत्कच का चरित्र बहुत ही उन्नत रूप में प्रस्तुत किया है।

घटोत्कच के अलावा दुर्योधन, शकुनि तथा दुःशासन के चरित्र भी इस नाटक में उभरकर समाने आये हैं। ये सभी अत्यन्त अभिमानी तथा क्रूर प्रकृति के हैं। निहत्थे बालक अभिमन्यु को मारकर वे प्रसन्न होते हैं।

नाटक वीर तथा करुण रस का सम्मिलन है। एक और अभिमन्यु की मृत्यु से करुण रस का वातावरण प्रस्तुत है तो दूसरी और घटोत्कच तथा दुर्योधनादि के विवाद में वीररस अपना अस्तित्व व्यक्त करता है। यह नाटक वास्तविकता के निकट प्रतीत होता है मानव हृदय की आकांक्षाओं एवं कमजोरियों के चित्रण में नाटककार अत्यन्त सफल है।

इस नाटक में भरतवाक्य का अभाव है, अतः कुछ लोग इसे अपूर्ण बतलाते हैं, संभव है आगे इसमें कुछ अंश रहा हो। परन्तु यह नाटक अपने प्रयोजन में पूर्ण है।

10. **प्रतिज्ञायौगन्धरायण** – यह लोककथाश्रित नाटक है। इसमें कौशाम्बी के राजा वत्सराज उदयन द्वारा उज्जयिनी के राजा प्रद्योत की पुत्री वासवदत्ता के हरण की कथा है। इसमें चार अंक हैं। इस नाटक का नामकरण अमात्य यौगन्धरायण की प्रतिज्ञाओं पर आश्रित है। इस नाटक में अमात्य यौगन्धरायण अपने स्वामी को शत्रु के बन्दीगृह से छुड़ा लाने की प्रतिज्ञा करता है तथा अनेक विध्नों के उपस्थित होने पर भी उसे पूर्ण कर बताता है।

इस नाटक का नायक वत्स देश का राजा उदयन कलाकारों का सिरमौर है। वह भरतवंशी राजा है। वह अत्यन्त रूपवान है तथा उसके रूप पर महासेन प्रद्योत की स्त्री भी मुग्ध है। वीणावादन में वह आचार्य है। उसके वीणावादन की प्रसिद्धि देश देशान्तर में व्याप्त है तथा बन्दी अवस्था में ही उसे प्रद्योतपुत्री वासवदत्ता को वीणा सिखाने का दायित्व मिलता है। अतुलित कला प्रेमी होने के साथ–साथ वह शौर्य तथा पराक्रम से भी ओतप्रोत है। कृत्रिम गज को पकड़ने का प्रयास करते समय जब प्रद्योत की सेना उस पर टूट पड़ती है, वह किंचित् मात्र भी विचलित नहीं होता तथा अनेकों को मृत्यु के घाट भेज देता है। यहाँ उसके धैर्य तथा पराक्रम की परीक्षा होती है जिसमें वह सफल होता है।

जब उसे बन्दी बना लिया जाता है तो वह अपने आपको मन से बन्दी नहीं मानता तथा यौगन्धरायण द्वारा मुक्ति का पूरा प्रबन्ध कर लेने पर भी वासवदत्ता को लेकर चलने का निश्चय करता है। इस काम में वह अपने कौशल तथा यौगन्धरायण के बुद्धि कौशल से सफल होता है।

उदयन के अलावा अमात्य यौगन्धरायण की भी इस नाटक में महती भूमिका है। वह बुद्धिमत्ता तथा नीतिकौशल का चूडान्त निदर्शन है। अन्य पात्रों में उज्जयिनी के राजा महासेन प्रद्योत प्रतापी राजा हैं। सर्वत्र उनके आधिपत्य का सम्मान है। वह गुणग्राहक है। मन ही मन वह वत्सराज उदयन के गुणों का प्रशंसक है। रुमण्वान तथा विदूषक दोनों स्वामिभक्त हैं।

'प्रतिज्ञायौगन्धरायण'' भास के सफल नाटकों में अपना स्थान रखता है। कथानक का विन्यास, पात्रों का चरित्र–चित्रण, संवाद योजना एवं रसयोजना सभी का इस नाटक में सुन्दर समन्वय है। काव्यकला के परिपाक की दृष्टि से भी यह नाटक उच्चस्तरीय है। इसमें राजनीति एवं कूटनीति का साम्राज्य है। स्वामीभक्ति का महत्त्व इस नाटक में सर्वत्र लक्षित होता है। सूक्तियों का इसमें प्राचुर्य है।

11. **स्वप्नवासवदत्तम्** – भास विरचित रूपकों मं यह सर्वश्रेष्ठ है। वस्तुतः यह भास की नाट्यकला का चूडान्त निदर्शन है। यह छः अंकों का नाटक है। इसमें प्रतिज्ञायौगन्धरायण से आगे की कथा का वर्णन है। इस नाटक का नामकरण राजा उदयन के द्वारा स्वप्न में वासवदत्ता के दर्शन पर आधारित है। स्वप्न वाला दृश्य संस्कृत नाट्य साहित्य में अपना विशेष स्थान रखता है।

यह नाटक नाट्यकला की सर्वोत्तम परिणिति है। वस्तु, नेता एवं रस–तीनों ही दृष्टि से यह उत्तम कोटि का है। नाटकीय संविधान, कथोपकथन, चरित्र–चित्रण, प्राकृतिक वर्णन तथा रसों का सुन्दर सामन्जस्य इस नाटक में पूर्ण परिपाक को प्राप्त हुये हैं। मानव हृदय की सूक्ष्मातिसूक्ष्म भाव दशाओं का चित्रण इस नाटक में सर्वत्र देखा जा सकता है। नाटक का प्रधान रस श्रृंगार है तथा हास्य की भी सुन्दर उद्भावना हुई है।

12. **अविमारक** – यह लोककथा सम्बन्धी छः अंकों का रूपक है। इसमें राजा कुन्तिभोज की पुत्री कुरंगी का राजकुमार अविमारक से प्रणय एवं विवाह का वर्णन है। नायक के आधार पर इसका नामकरण अविमारक रखा गया है। अविमारक का यथार्थ नाम वि णुसेन था तथा अवि रूपधारी असुर को मारने से उसकी संज्ञा अविमारक है।

नाटक का नायक अविमारक है। वह अतुलित पराक्रमशाली है। सहज पराक्रमशीलता तथा पर दुःखकातरता उसके स्वभाव के अंग हैं। इसी कारण वह राजकुमारी कुरंगी पर हाथी के आक्रमण करने पर उसे मुक्त करता है। अविमारक एक धीरललित नायक के रूप में इस नाटक में प्रस्तुत किये गये हैं। नाटक की नायिका कुरंगी है। वह रूपयौवन सम्पन्ना है। अन्य पात्र सौवीरराज तथा कुन्तिभोज हैं।

नाटकीयता की दृष्टि से भास के अन्य नाटकों की तरह यह नाटक भी सफल है। सरल भाषा का प्रयोग नाटक की अभिनेयता में चार–चाँद लगा देता है, कथोपकथनों में स्वाभाविकता तथा भावांकन भास की अपनी विशेषता है। छोटे–छोटे वाक्य, सरल भाषा, रसानुकूल एवं पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग इस नाटक को उच्चकोटि में ला खड़ा करता है। इस नाटक का प्रधान रस श्रृंगार है तथा अन्य रस उसके सहायक बनकर आये हैं।

काव्यकला की दृष्टि से भी यह नाटक नितान्त उदात्त है। परिस्थितियों, अवस्थाओं एवं भावों का सटीक शब्दों एवं आलंकारिक भाषा में वणर्न सर्वत्र विद्यमान है। प्रकृति चित्रण में नाटककार पूर्णतया सफल रहे हैं। नाटक में सूक्तियाँ यत्र–तत्र बिखरी हुई हैं। प्रसिद्ध सूक्ति ''कन्यापितृत्वं खलु नाम कष्टम्'' का भास ने यहाँ उत्तर उपस्थित किया है – ''कन्या पितृत्वं बहुवन्दनीयम्।''

इस प्रकार सभी दृष्टियों से यह रूपक प्रशस्त कहा जा सकता है।

13. **चारुदत्त** – महाकवि भास की नाट्य श्रृंखला में चारुदत्त अन्तिम कड़ी माना जाता है। इसकी कथावस्तु चार अंकों में विभाजित है। शूद्रक के प्रसिद्ध प्रकरण ''मृच्छकटिक'' का आधार यही माना जाता है। इसमें कवि ने दरिद्र चारूदत्त एवं वेश्या वसन्तसेना की प्रणय–कथा का वर्णन किया है। एक अन्य पात्र शकार है जो प्रतिनायक के रूप में है। प्रेम के आदर्श की सामाजिक प्रस्तुति इसमें दृष्टव्य है।

इस नाटक का नायक वणिक्पुत्र आर्य चारूदत्त है। उसी के नाम पर इस नाटक का नामकरण हुआ है। नाटक की सम्पूर्ण घटनाएँ उसी के सुकृत्यों पर केन्द्रित हैं। चारुदत्त की दरिद्रता का बड़ा ही मार्मिक चित्रण इसमें किया गया है। चारुदत्त अत्यन्त दानी, गुणवान् एवं

रूपवान है। दानशीलता के कारण ही वह दरिद्र हो गया है। चारुदत्त धीर प्रक ति का मानव है। वह कला मर्मज्ञ है। वह महान् धार्मिक है तथा निर्धनावस्था में भी पूजा एवं बलिकर्म सम्पन्न करता है।

नाटक की नायिका वसन्तसेना है। वह उज्जयिनी की एक प्रसिद्ध गणिका है। वह अत्यन्त रूपवती है। शकार तथा विट उसके रुप–जल के पिपासु हैं। गणिका होते हुये भी उसका चारित्रिक स्तर ऊँचा है। वह चारुदत्त के गुणों पर अनुरक्त है। उसके एक–एक गुण वसन्तसेना के प्रेम को दृढ़ करते जाते हैं। शकार से रात्रि में रक्षा और विदूषक के साथ वसन्तसेना को सकुशल घर पहुँचाना, चेट को प्रवारक देना, वसन्तसेना के न्यास की चोरी हो जाने पर उसे अपने स्त्री का अत्यन्त मूल्यवान हार देना – ये सभी गुण वसन्तसेना के ह्रदय में स्थायी प्रभा डालते हैं तथा वह स्वयं अभिसार के लिये उसके पास चल देती है। वसन्तसेना गणिका होने पर भी धन लोभिनी नहीं है। वह अत्यन्त उदार मनवाली नायिका है।

नाटक के अन्य पात्रों में चारुदत्त का मित्र मैत्रेय विदूषक है। वह जन्म का ब्राह्मण है। वह अपने मित्र का विपत्ति–सम्पत्ति दोनों समयों में साथ देने वाला है। मैत्रेय संस्कृत नाट्कों में अन्य विदूषकों के समान केवल भोजनभट्ट मूर्ख ब्राह्मण नहीं है। वह समयानुसार उसके हित सम्पादन के लिए कठिन कार्यों को भी सम्पन्न करता है।

शकार इस नाटक में खलनायक है। वह मूर्ख है। सामान्य से सामान्य बात का भी उसे ज्ञान नहीं है। गुणवानों के प्रति उसका कोई आकर्षण नहीं है। वह वसन्तसेना के रूप पर मुग्ध है तथा बलात् उससे प्रेम करना चाहता है।

यह नाटक दैव–दुर्विपाकवश अकस्मात् समाप्त हो जाता है तथा यह सहज में अनुमित हो जाता है कि अपने वर्तमान रूप में यह पूर्ण नहीं है। यह भी संभावना है कि इस नाटक की रचना करते समय भास की मृत्यु हो गई हो तथा इस प्रकार यह अधूरा रह गया हो।

यह नाटक सरल व सुबोध है। चरित्र–चित्रण की दृष्टि से बेजोड़ है। नाना प्रकार के सज्जन से सज्जन तथा दुर्जन से दुर्जन यहाँ वर्तमान हैं। एक ओर चारुदत्त सज्जनता की सीमा है तो दूसरी ओर शकार दुर्जनता का चूडान्त प्रतीक है, कथोपकथन की दृष्टि से भी यह नाटक उच्च कोटि का है।

इस नाटक में भास का कविह्रदय भी पूर्णरूप से अभिव्यक्ति को प्राप्त हुआ है। प्रकृति का चित्रण भी स्वाभाविक एवं ह्रदयाकर्षक है। नाटक का प्रधान रस श्रृंगार है तथा अन्य रसों का भी समयानुसार सुन्दर प्रयोग किया गया है।

इस नाटक में देशकाल का चित्रण बड़ा ही स्वाभाविक है। द्यूत का वर्णन दृष्टव्य है। दास–प्रथा का संकेत सज्जलक द्वारा वसन्तसेना की चोरी को मुक्त कराने के उद्योग से लगता है। चोरी का दृष्टान्त सज्जलक का कृत्य है।

नाटक की भाषा सरल, सरस एवं पात्रानुकूल है।